International Journal of Enhanced Research in Educational Development (IJERED)
ISSN: 2320-8708, Vol. 12 Issue 3, May.-June, 2024, Impact Factor: 8.376

कबीर की रचनाओं में समाज व्यवस्ता धार्मिक ब्राह्यचारो द्वारा स्त्री जीवन शैली के विरोध में प्रगति और प्रगतिशीला का अध्ययन

अनामिका सक्सेना[1], डॉ. अमन अहमद[2]

[1]रिसर्च स्कॉलर, मोनाड यूनिवर्सिटी, हापुड़
[2]सहायक प्रोफेसर, मोनाड यूनिवर्सिटी, हापुड

सारांश

कबीर दास एक महान भक्तिकालीन संत और कवि थे, जिनकी कविताओं में उन्होंने समाज में स्त्री की अवस्था और सम्मान को महत्वपूर्ण रूप में उजागर किया। इस अध्ययन में, हमने कबीर दास की कविताओं को विशेष ध्यान से अध्ययन किया है और स्त्री चेतना के संबंध में उनकी विचारधारा को समझने का प्रयास किया है। कबीर दास की कविताओं में स्त्री का स्थान बहुत महत्वपूर्ण है। उन्होंने स्त्री को समाज की अदालत में समान अधिकारों और स्वतंत्रता का हकदार माना। उनकी कविताओं में स्त्री की सशक्तिकरण की बात की गई है, जिससे समाज में उनकी अवधारणा को बदला जा सके। इस अध्ययन में, हमने कबीर दास की कविताओं का तुलनात्मक विश्लेषण किया है और उनकी कविताओं में स्त्री चेतना के प्रति उनकी दृष्टिकोण को समझने का प्रयास किया है। हमने उनके द्वारा प्रयुक्त भाषा, छंद, और विविधता के माध्यम से स्त्री के अनेक रूपों का चित्रण किया है, जो उनकी कविताओं को अत्यधिक महत्वपूर्ण बनाता है। इस अध्ययन के माध्यम से, हम उनके काव्य में स्त्री चेतना के विभिन्न पहलुओं को समझ सकते हैं और उनके समाज में स्त्री के स्थान के बदलते परिप्रेक्ष्य को विश्लेषित कर सकते हैं।

मुख्य शब्दः भक्तिकालीन, सशक्तिकरण, भाषा, छंद, विविधता, परिप्रेक्ष्य

प्रस्तावना

भक्तिकाल के कवियों ने मुख्यतः स्वान्तःसुखाय रचना की। कबीर उसी धारा के महत्त्वपूर्ण कवि हैं। उनकी कविताई एवं समाज–सुधार दोनों का भारतीय जन–मानस पर गहरा प्रभाव पड़ा। हिन्दी आलोचना में उनके दोनों रूपों को लेकर बहस होती रही है। यद्यपि उन्होंने समाज–सुधारक होने की कोई घोषणा नहीं की, पर उनकी रचनाओं में कवित्व और समाज–सुधार दोनों का समावेश मिलता है। तो सवाल है कि कबीर की पहचान किस रूप में की जाए? हिन्दी के आलोचकों ने कबीर का मूल्यांकन किस रूप में किया? कबीर के कवि होने, या समाज–सुधारक होने के विवाद का तर्क क्या है कवि या समाज–सुधारक के रूप में उनकी रचनाओं को पढ़े जाने का अन्तर क्या है? उनके दोनों रूपों का पारस्परिक सम्बन्ध क्या है? क्या इन्हें एक–दूसरे से पृथक देखा जा सकता है? इन प्रश्नों के सहारे हम कबीर की रचनाओं में मौजूद काव्यत्त्व और सामाजिक सरोकारों से अवगत हो सकेंगे। उनके साहित्यिक महत्त्व से परिचित हो सकेंगे, सामाजिक महत्त्व समझ सकेंगे। इन्हीं बातों को ध्यान में रखकर 'कबीर की सामाजिक विचारधाराः कवि बनाम समाज–सुधारक' विषय को इस पाठ में शामिल किया गया है।

परिणाम एवं चर्चा

कबीर का समाज दर्शन

कबीर का प्रादुर्भाव ऐसे समय में हुआ जब समाज अनेक बुराईयों से ग्रस्त था । छुआछुत, अंधविश्वास, रूढ़िवादिता, मिथ्याचार, पाखण्ड का बोलबाला था और हिन्दू और मुसलमान आपस में झगड़ते रहते थे । धार्मिक पाखण्ड अपनी चरम सीमा पर था और धर्म के ठेकेदार स्वार्थ की रोटियाँ धार्मिक उन्माद के चूल्हे पर सेंक रहे थे । धार्मिक

कट्टरता और संकीर्णता के कारण समाज का संतुलन बिगड़ रहा था, कुरीतियों और कुप्रथाओं का बोलबाला था तथा सामाजिक विषमता बढ़ती जा रही थी।

उस समय किसी ऐसे महात्मा या समाज सुधारक की आवश्यकता थी, जो समाज में व्याप्त इन बुराईयों पर निर्भीकता से प्रहार कर सके, दोनो धर्मों के अनुयायियों को बिना किसी भेदभाव के फटकार सके और सदाचरण का उपदेश देकर सामाजिक समरसता की स्थापना करे । कबीर ही इस आवश्यकता की पूर्ति करते थे । कबीर ने विभिन्न क्षेत्रों में समाज सुधार का स्तुत्य प्रयास किया । उनके द्वारा किए गए इस प्रयास को निम्न शीर्षकों द्वारा समझा जा सकता है

1. रामदृरहीम की एकता का प्रतिपादन

कबीर चाहते थे कि हिन्दू दृ मुसलमान प्रेम एवं भाईचारे की भावना से एक साथ मिलकर रहे । उन्होंने राम और रहीम की एकता स्थापित करते हुए बताया कि ईश्वर दो नहीं हो सकते । यह तो लोगों का भ्रम है जो खुदा को परमात्मा से अलग मानते है ।

''दुई जगदीस कहाँ ते आया । कहु कौने भरमाय ।

मुसलमानों की भाँति उन्होंने मुर्तिपूजा का खण्डन किया, एकेश्वरवाद को मान्यता दी और अवतारवाद का विरोध किया ।

2. जातिदृप्रथा का खण्डन

कबीर भक्त और कवि बाद में है, समाज सुधारक पहले है । उनकी कविता का उद्देश्य जनता को उपदेश देना और उसे सही रास्ता दिखाना है । उन्होंने जो गलत समझा उसका निर्भीकता से खण्डन किया । अनुभूति की सच्चाई और अभिव्यक्ति की ईमानदारी कबीर की सबसे बड़ी विशेषता है । कबीर ने समाज में व्याप्त जातिदृप्रथा, छुआछुत एवं ऊँचदृनीच की भावना पर प्रहार करते हुए कहा कि जन्म के आधार पर कोई ऊँचा नहीं होता, ऊंचा वह है जिसके कर्म अच्छे है

''ऊँचे कुल का जनमिया करनी ऊँच न होय ।
सुवरन कलस सुरा भरा साधू निन्दत सोय ।।''

3. मूर्तिदृपूजा का विरोध

कबीर ने समाज में व्याप्त मूर्तिदृपूजा का डटकर विरोध किया । वे सामान्य जनता को समझाते हुए कहते है कि मूर्तिदृपूजा से भगवान नहीं मिलते, इससे तो अच्छा है कि 'ार की चाकी को पूजा जाए

''पाहन पूजै हरि मिले तौ मैं पूंजू पहार ।
'ार की चाकी कोई न पूजै पीस खाय संसार ।।''

4. जीव हिंसा का विरोध

कबीर ने धर्म के नाम पर व्यापत हिंसा का विरोध किया । हिन्दुओं में शाक्तों और मुसलमानों में कुर्बानी देने वालों को उन्होंने निर्भीकता से फटकारा और कहा कि दिन में रोजा रखने वाले रात को गाय काटते हैं । इस कार्य से भला खुदा कैसे प्रसन्न हो सकता है

''दिन में रोजा रहत हैं राति हनत हैं गाय ।
यह तौ खून वह बंदिगी कैसे खुसी खुदाय ।।''

5. हिन्दूदृमुस्लिम पाखण्ड का खण्डन

कबीर ने हिन्दू और मुसलमान दोनों को फटकारा। वे एक ओर हिन्दूओं के तीर्थाटन, छापा, तिलक का विरोध करते हैं तो दूसरी ओर रोजा, नमाज, अजान का। वे कहते हैं कि माला फेरने से नहीं, मन की शुद्धि से ईश्वर प्रसन्त होता है

''माला फेरत जुग गया गया न मन का फेर ।
कर का मनका डारि कै मन का मनका फेर ।।''

मुसलमान दिन भर रोजा रखकर रात को यदि गोहत्या करके ईश्वर को प्रसन्न करना चाहे तो यह निरा भ्रम है। ईश्वर इससे प्रसन्न होने वाला नहीं है। वे समाज में व्याप्त बुराईयों के कटु आलोचक हैं किन्तु उनकी आलोचना सुधार भावना से प्रेरित है। वे साफ कहते है कि हिन्दू और मुसलमान दोनों को सही मार्ग नहीं मिला

''अरे इन दोउन राह न पाई ।
मुसलमान के पीर औलिया मुरगी मुरगा खाई ।।''
''खाला केरी बेटी ēयाहै, 'ार ही में करे सगाई ।
हिन्दू अपनी करै बड़ाई गागर छुअन न देहीं ।
वेश्या के पायन तर सौवें यह देखो हिंदुआई ।।''

कबीर पढ़े लिखे न थे, किन्तु उनमें अनुभूमि की सच्चाई एवं अभिव्यक्ति का खारापन वि4मान था। वे अनुभवजन्य सत्य पर विश्वास करते है न कि शास्त्रोत्क बातों पर। शास्त्र के पण्डित को वे चुनौती देते हुए कहते हैं

''तू कहता कागद की लेखी मैं कहता आंखिन की देयी ।
मैं कहता सुरझावन हारी, तू राखा उरझोय रे ।।''

कबीर प्रगतिशील चेतना से युक्त एक विद्रोही कवि थे। उनका व्यक्तित्व क्रातिकारी था। धर्म और समाज के क्षेत्र में व्याप्त पाखण्ड, कुरीतियों, रूढियो, अन्धविश्वासों की उन्होंने मुखर आलोचना की और ऊँचदृनीच, छुआछूत जैसे सामाजिक कोढ़ को दूर करने के लिए भरसक प्रयास किया। ये सच है कि कबीर का मुख्य स्वर विद्रोह का था परन्तु वे मूल्यहीन विद्रोही नहीं थे। वे भक्त, कवि, समाजदृसुधारक, लोक नेता सब एक साथ थे। कबीरदास ने प्रत्येक व्यक्ति के लिए धर्म और उपासना के दरवाजे खोल दिए। इसलिए कबीरदास ने निर्गुण उपासना पर जोर देते हुए कहा है

''जैसे तिल में तेल है, ज्यों चकमक में आग ।
तेरा साई तुझमें, तु जाग सके तो जाग ।।''

कबीर के ईश्वरोपासना की माँग वास्तव में आर्थिक और सामाजिक न्याय की मांग थी । कबीर की माँग उन बनावटी एवं ऊपर से लादी हुई मर्यादाओं और परम्पराओं को तोड़ने की माँग थी जो विशाल जनसमूह को उसके अधिकारों से वंचित किए हुए थी । वे जनदृसमाज में होने वाले हर प्रकार के शोषण को मिटा देना चाहते थे । इसलिए उन्होंने कहा था

''कबीरा कुआं एक है, पानी भरै अनेक ।
बर्तन में ही भेद है, पानी सब में एक ।।

कबीर के आविर्भाव से पूर्व उत्तर भारत में अनेक धार्मिक साधनाएं प्रचलन में थीं। सर्वाधिक प्रभाव नाथपंथी योगियों का था। दक्षिण में उमड़ कर वैमणव भक्तिदृधारा उत्तर भारत में प्रवाहित हो चुकी थी। कट्टर एकेश्वरवादी इस्लाम निम्नवर्गीय जनता को राजनैतिक और सामाजिक कारणों से प्रभावित कर रहा था। सूफी साधक अपनी उदारता और सात्विकता के कारण भारतीय जनमानस के निकट आ गए थे। शैव और शाक्त मतों का भी प्रचार हो रहा था, पर उसकी गतिमयता समाप्त हो चुकी थी। विशेमाकर शाक्त

(शक्ति के उपासक) साधना तांत्रिक पद्धति को स्वीकार करने के कारण गुह्य हो गयी थी। उनके अतिरिक्त अनेक प्रकार के तपस्वी और साधक अपनेदृअपने रंग में मस्त थे और विविध साधनाओं में लीन कबीर विलक्षण प्रतिभा को लेकर उत्पन्न हुए। ''युगावतारी शक्ति और विश्वास लेकर पैदा हुए थे और युग प्रवर्तक की दृढ़ता उनमें वर्तमान थी, इसीलिए वे युगदृप्रवर्तन कर सके थे।''

दो धार्मिक आन्दोलनों की चर्चा आवश्यक है। एक धारा पश्चिम से आई यह सूफी साधना में विश्वास करती थी। मजहबी मुसलमान हिन्दू धर्म के मर्म पर चोट नहीं कर पाए थे। उन्होंने उनके वाह्य शरीर मात्र को विक्षुēध किया था, परन्तु सूफी भारतीय साधना के अविरोधी थे। उनका उदारतापूर्ण प्रेम व्यवहार भारतीय जनता का दिल जीत रहा था। फिर भी ये आचार प्रधान भारतीय समाज को आकृमट नहीं कर सके। उनका तालमेल आचार प्रधान हिन्दू धर्म साथ नहीं हो पाया बौद्ध सं'ा के अनुकरण पर प्रतिमिठत विपुल वैराग्य के भार को न सूफी मतवाद और न योगमार्गीय निर्गुण परम तत्व की साधना ही वहन कर सकी। देश में पहली बार वर्णाश्रम व्यवस्था को एक अननुभूतपूर्व विकट परिस्थिति का सामना करना पड़ा।

अब तक वर्ण व्यवस्था का कोई विरोधी नहीं था। कोई प्रतिद्वन्द्वी नहीं था। आचारभ्रमट व्यक्ति समाज से बहिमकृत कर दिया जाता था और वे एक नई जाति की रचना कर लेते थे। फिर उसके सामने एक जबर्दस्त प्रतिद्वन्द्वी आया, जो प्रत्येक जाति और व्यक्ति को अंगीकार करने को तैयार था परन्तु उसकी एक शर्त थी कि वह उसके विशेमा प्रकार के धर्ममत को स्वीकार कर ले। समाज से दंडित व्यक्ति वहां शरण पा सकता था। उसकी इच्छा मात्र से उसे एक सुसं'ाटित समाज का आश्रय मिल सकता था ऐसे ही समय में दक्षिण से वेदान्त प्रभावित भक्ति का आगमन हुआ, जो इस विशाल भारतीय महाद्वीप के इस छोर से उस छोर तक फैल गया।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का मानना हैदृ''इसने दो रूपों मे आत्म प्रकाश किया। पौराणिक अवतारों का केन्द्र सगुण उपासना के रूप में और निर्गुण परब्रह्म जो योगियों का ध्येय था, उसे केन्द्र करके निर्गुण प्रेमभक्ति की साधना के रूप में। पहली साधना ने हिन्दू जाति की वाह्याचार की शुमकता को आंतरिक प्रेम से सींच कर रसमय बनाया और दूसरी साधना ने वाह्याचार की शुमकता को ही दूर करने का प्रयत्न किया। एक ने समझौता किया, दूसरी ने विद्रोह का, एक ने शास्त्र का सहारा लिया, दूसरी ने अनुभव का। एक ने श्रद्धा का पथ प्रदर्शक माना, दूसरी ने ज्ञान को। एक ने सगुण भगवान को अपनाया दूसरी ने निर्गुण भगवान को। पर प्रेम दोनों का ही मार्ग था, सूखा ज्ञान दोनों को अप्रिय था, केवल वाह्याचार दोनों को सम्मत नहीं थे, आंतरिक प्रेमदृनिवेदन दोनों को अभीमट था, अहैतुक भक्ति दोनों को काम्य थी, बिना शर्त के भगवान के प्रति आत्मदृसमर्पण दोनों के प्रिय साधन थे।इन बातों में दोनों एक थे। एक प्रधान भेद यह था कि सगुण भाव से भजन करने वाले भक्त भगवान को दूर से देखने में रस पाते रहे, जबकि निर्गुण भाव से भजन करने वाले भक्त अपने आप में रमे हुए भगवान को ही परम काम्य मानते थे।

स्पमट है कि विद्रोह, अनुभव5, ज्ञान निर्गुण का रास्ता अपनाने वाले कबीर थे। परन्तु प्रेम तत्व दोनों मे समान था। तुलसी के राम प्रेम के प्यारे हैं। उन्हें जानना हो तो प्रेम कीजिए।

कबीर प्रेम मार्ग के सच्चे पथिक हैं।
वे उस हृदय को श्मशान मानते हैं जहां प्रेम नहीं है। विरह नहीं है।
तत्त्वतरू प्रेम ही वही अमृत है, जो सबको मिलाता है। जोड़ता है। एक करता है। चरित्र को निर्मलदृपावन बनाता है।

समाज में अव्यवस्था साम्प्रदायिकता, भेददृभाव, विमामता, स्वार्थ आदि का कारण है प्रेम का अभाव। जो प्रेम करेगा, वह उदात्त होगा। उसका चरित निर्मल होगा वहां भेद न रहेगा। अभेद दृमिट का सम्यक् विकास होगा। इसलिए कबीर ने प्रेम पर बल दिया। प्रेम के लिए शर्त रखी आत्मबलिदान।

अहंकार का त्याग। जब तक अहंकार है प्रेम नहीं मिल सकता, भेद बुद्धि बनी रहेगी। इसलिए कबीर अहं को इदं में मिलाने की बात करते हैं। मान एवं प्रेम को साथदृसाथ चलते देखना असंभव है, जैसे एक म्यान में दो तलवार का होना।

भक्ति प्रेम से ही मिल सकती है। प्रेम हो तो हृदय शुद्ध हो जाता है। वहां कोई विकार नहीं रहता। वह ऐसा पात्र बन जाता है, जहां परमात्मा की प्रतीति हो। भक्ति के आदर्श की द्विधाहीन भामाा में 'ोमाणा करते हुए कबीर प्रेम के बिना भक्ति को ''उदरपूर्ति का कारण, व्यर्थ जन्म गंवाना और दंभ विचार कहते हैं।

ज्ञान सब मिलाकर हमारी अल्पज्ञता को ही व्यक्त करता है। परन्तु प्रेम सम्पूर्ण त्रुटियों को भर देता है। पुत्र कितना ही त्रुटियों से भरा हो पर माता कुमाता नहीं हो सकती वह प्रेम से उनकी सारी त्रुटियों को हर लेती है। प्रेमी सम्पूर्ण अभावों को अपने प्रेम से भर देता हैदृ ''जो मिलिए संग साजन तौ धारक नरक हूं की न।'' नरक स्वर्ग का अभाव है। प्रकार का अभाव अंधकार है। दुरूख सुख का अभाव मात्र है। अभाव दूर करने का एक मात्र ब्रह्मास्त्र है प्रेम। दरिद्रता, पीड़ा, अभाव सब एक ही शēद के पर्याय हैं और सम्पूर्ण अभावों को दूर करने की शक्ति प्रेम में है। प्रेमदृभाव की कमी ही अभाव है। प्रेम आ जाए, सब पूर्ण है। इसलिए कबीर की समाजदृसापेक्षता और उनकी सामाजिक चेतना का स्पमट प्रमाण इससे मिलता है कि वे समाज की पीड़ा को जानते थे। उनकी शक्ति सीमा को पहचानते थे और एक मात्र रामबाण प्रेम को ही मानते थे।

कबीर ने अनेक बार इस तथ्य की पुमिट की है कि इस्लाम का खुदा भी निराकार है और भारतीय 'चिंतन का सार निरपेक्ष सत्ता भी निराकार है। परन्तु जिज्ञासा की जितनी, तुमिट, तर्क की कसौटी पर खरी हिन्दू धर्म की परम सत्ता उतरती है, उतना इस्लाम का खुदा नहीं।

कबीर का मूल उद्देश्य भारत रामट्र की रक्षा था। कारण भारतीय रामट्रीयता हिन्दुत्व में निहित है और साथ ही साथ उन्हे हिन्दू धर्म की संकीर्णताओं का भी निराकरण करना था। लोगों को धर्म परिवर्तन से रोकना भी था। वे सत्संग से इस निमकर्मा पर पहुंचे थे कि परम सत्ता प्राप्ति के लिए संसार का कोई धर्म प्रार्थना और कर्मकाण्ड के अलावा किसी दूसरे मार्ग की चर्चा नहीं करता। कर्म करते हुए विश्राम के क्षणों में कही भी ध्यान और योग में विरत होने की स्वतंत्रता एकमात्र हिन्दू दर्शन में ही उपलēध है।

कबीर आजीवन सम्प्रदायवाद, बाह्याचार और वाह्य भेदभाव पर कठोरतम आ'ाात करते रहे। सुन्नत, बांग और कुरबानी हो या हिंदूमत के तीर्थ, बलिदान, व्रत। उन्होंने कभी खंडन के लिए खंडन नहीं किया। उनका केन्द्रीय तत्व भक्ति था।

सामाजिक वही है जो सहृदय है जो संवेदन ग्रहण कर सकता है। भक्त से बढ़ कर कोई सामाजिक नहीं हो पाता। उससे बढ़कर किसी में, पराई पीर की पहचान नहीं हो सकती। जब वह चराचर जगत में अपने ही प्रभु का प्रतिबिम्ब देखता है तो सारा भेद मिट जाता है।

समाज के पतन का कारण है चरित्र पतन। चरित्र रहे तो सामाजिक मूल्यों की रक्षा की जा सके। समाज को गिरनेदृटूटने से बचाया जा सके। उनके युग में समाजवाद नहीं था। पर नीति न्यायदृधर्म की मर्यादा थी। आज खुलेआम धर्म का स्थान अन्यायदृअनीति ने ले लिया है। आज समाजवाद का आधार न धर्म है, न नैतिकता और न है पूरे समाज की उन्नति। परन्तु कबीर की भक्ति का सीधा सम्बन्ध चरित्रदृपालन से है। चरित्रहीन व्यक्ति ही समाज का शोमाण करता है। गीता के अनुसार समाज का सच्चा सेवक वही हो सकता है, जिसने मन पर अधिकार कर लिया है, कामनाओं से मुक्त हो गया है।

कबीर का सिद्धांत हैदृ मनुमय ईश्वर की शरण जाय, सद्विचारों के लिए, आत्मबल के लिए, अभेद मार्ग पर चलने के लिए, क्रोधदृलोभ से बचने के लिए जब मनुमय जीवदृजीव के बीच में भेद न मानेगा, तब वह कैसे किसी के साथ विश्वास'ाात कर सकता है? कैसे किसी को धोखा दे सकता है? किसी का गला काट सकता है? समाज को ऊपर उठाने के लिए इसी चरित्र और अभेद बुद्धि की आवश्यकता है।

कबीर को समाज सुधारक कहना उनके साथ अन्याय होगा। वे मूलतरू आध्यात्मिक चेतना से सम्पन्न थे। जो आध्यात्मिक है, वह मानवदृमुक्ति का प्रयासी है। इसी से मानवता का पथ आलोकित होता है। समाज को सही दिशा मिलती है।

डॉ. राम चन्द्र तिवारी कबीर के मानवतावाद, सामाजिक चेतना पर सटीक टिप्पणी करते हैं
''कबीरदास के भेददृभाव की समस्त सीमाओं को तोड़ कर जिस आदर्श मानव को सामने रखा है वह मानव व्यक्तित्व के विकास की सम्पूर्ण संभावना को समाप्त करके उसे ईश्वर तक पहुंचा देने वाला है। नर का नारायणत्व प्राप्त कर लेना ही सच्चा धर्म है।

कबीर आत्म विकास, प्रभुदृसानिध्य, प्रभु प्राप्ति के द्वारा सामाजिक चेतना को गति देने वाले हैं। व्यक्ति का विकास हो, समाज का विकास स्वयं होगा। कबीर अपने आचरण से समाज को सही मार्ग पर लाना चाहते हैं। यदि उनकी पुकार कोई नहीं सुनता तो वह अकेले ही प्रयाण करते। जो सुधरना नहीं चाहता, उसे सुधारने का प्रयत्न व्यर्थ है। वे अपने उपदेश 'साधो' भाई को देते हैं। यदि उनकी बात सुनने वाला कोई न मिलता तो वे निश्चित होकर स्वयं ही पुकार कर कह उठतेदृ'अपनी राह तू चले कबीरा। अपनी राह अर्थात धर्म, सम्प्रदाय, जाति, कुल, और शास्त्र की रूढ़ियों से जो बद्ध नहीं है, जो अपने अनुभव के द्वारा प्रत्यक्षीकृत है ऐसा संत, मस्तमौला, खरा कहने वाला कबीर ही हो सकता है जो समाज को गंतव्य तक ले जा सकता है।

निष्कर्ष

हम कह सकते हैं कि कबीर की आध्यात्मिक मुक्ति सामाजिक मुक्ति से एकदम अलग नहीं है। उनका परमात्म चिंतन लोक चिंतन की उपेक्षा नहीं करता। उनकी धार्मिक मान्यताएं सामाजिक संदर्भों से निरपेक्ष नहीं है। उनके सामाजिक सुधार की मान्यताएं आध्यात्मिक विचारों की परिधि में ही समाहित है। उन्होंने आध्यात्मिक साम्यता में ही सामाजिक समता की परिकल्पना की है। भक्त होते हुए भी वे अपने सामाजिक दायित्व का पूरा पूरा निर्वाह करते हैं। वे ऐसे भक्त कवि हैं जिनके रचना कर्म का एक प्रमुख पक्ष है दृ सामाजिक विषमता का उन्मूलन।

कबीरदास अनपढ थे परंतिषक्षत होते हुए भी उन्होंने समाज में व्याप्त अंधकार को अपनी वाणी रुपी रोषनी की मषाल से समाप्त करने का प्रयास किया उन्होने जनसाधारण की भाषा में सामाजिक चेतना उत्पन्न करने का प्रयास किया जिसमें आडमबंरवाद, मूर्तिपूजा, वर्ण–व्यवस्था, जाति–पाती इत्यादि का पुरजोर विरोध किया। उन्होने अपनी रचनाओं के जरिए धर्मनिरपेक्षता, सामाजिक समरसता, कर्म प्रधानता तथा मानवतावादी दृष्टिकोण का प्रतिपादन किया। वे परिस्थितियों से समझौता करने के लिए सामाजिक विषमताओं में क्रांति चाहते थे। वे दलित के प्रति सहृदय और उदार थे और विषमता के प्रति उग्र आक्रोष रखते थे। अतः हम कह सकते है कि उनकी वाणी ने उन्हें एक युग चेता कवि के रुप में स्थापित किया तथा उन्होनें समाज का चित्रण काव्य सीमा में रह कर ही कियज्ञं कबीर धर्म को रोटी का माध्यम नहीं बनाते हैं । 'झीनी–झीनी रे बीनी चदरियाँ' में जो आध्यात्मिक स्वरलहरी परिलक्षित होती है वह प्रकारान्तरेण श्रम के प्रति उनकी निष्ठा को उजागर करती है और सार्वजनिक मंत्री–मठाधीशी को चुनौती देती है । जो अध्यात्म ईश्वर को रोटी का माध्यम बनाकर लोगों को ठगता है वह कबीर को स्वीकार नहीं है । लोक रूपों और प्रतीकों में संवेगात्मक रूप से जो बात सम्प्रेषित करते हैं उसकी अर्थवत्ता और प्रमाणिकता ऐसा आदर्श इतिहास निर्मित करती है कि कहा जा सकता है कि सदियों बाद कबीर का समाज दर्शन आज भी प्रासंगिक है ।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- फियोना दास "ट्रांसकेंडिंग द टेम्पोरलः मिस्टिक कॉन्शसनेस इन द पोएट्री ऑफ रूमी एंड मीराबाई" खंड 5, अंक 6, नवंबर–दिसंबर 2023
- ओझा, प्रीति. (2022)। सूफ़ी से संत तक समन्वयवाद आज संत कबीर की प्रासंगिकता।
- राजीव कुमार "कबीर की खोजः पूर्व–आधुनिक भारत में कविता के रूप में विवेक"2021

- ममता जी सागर "निश्चित रूप से पवित्र व्यक्ति बहरा है (नहीं) – महिला विषय और कबीर की कविता"2020
- वीरू राजभर और अन्य "क्या कबीर महिला विरोधी हैं? कबीरपंथी महिलाओं के बीच कबीर की छवियों का एक खोजपूर्ण अध्ययन" जर्नल ऑफ पॉजिटिव स्कूल साइकोलॉजी
- लुसियानी, मिशेला और जैक, सुसान और कैंपबेल, करेन और ऑर, एलिजाबेथ और ड्यूरेपोस, पामेला और ली, लिन और स्ट्रैचन, पेट्रीसिया और माउरो, स्टेफ़ानिया। (2019)। गुणात्मक स्वास्थ्य अनुसंधान का एक परिचय। प्रोफ़ेशनी इन्फर्मिएरिस्टिचे. 72. 60–68.
- बासुकी, एडी और सपुत्री, तियास। (2022)। "बुक ऑफ़ लव पोयम्स" पुस्तक में जलालुद्दीन रूमी की कविताओं की आलंकारिक भाषा का विश्लेषण। शिक्षा और मानव विकास जर्नल. 6. 93–104. 10.
- शशिकला मुथुमल असेला "समकालीन दक्षिण एशियाई अमेरिकी महिला कथाः "अंतर""2015
- मतलुबा अनवर "उज़्बेकिस्तान में महिलाएं और धार्मिक प्रथाएँः जून 2015
- क्रिस्टीन एलिजाबेथ मार्श "टूवाड्र्स वन वर्ल्डः ए जर्नी थ्रू द इंग्लिश एसेज ऑफ रबींद्रनाथ टैगोर"2013
- नौशीन शर्मिली "काज़ी नज़रूल इस्लाम में सार्वभौमिकता का दर्पणः विशिष्ट शैली के साथ एक मानवतावादी कवि" अंग्रेजी और मानविकी विभाग ब्रैक विश्वविद्यालय दिसंबर 2019
- राजेश चंद्रकांत धोत्रे "सामाजिक–सांस्कृतिक सुधार की खोजः संत कबीर और संत तुकाराम की कविता और समकालीन समय में इसकी प्रासंगिकता" गैप बोधि तरु – खंड – टप अगस्त 2023
- हुमैरा ज़ेड सईद "स्थायी विभाजनः पाकिस्तान की महिलाओं की कहानियों में लिंग, स्मृति और आघात"2012
- सत्संगी, अभिजीत और घोष, संजुक्ता। (2024)। प्रेम की अंतर–सांस्कृतिक अवधारणाएँः कबीर और रूमी की कविताओं में रूपकों का संज्ञानात्मक भाषाई विश्लेषण। धर्म का अंतर्राष्ट्रीय जर्नल. 5. 732–742
- परवीन, शाज़िया और अनवर, नादिया। (2021)। स्वयं का पुनरुत्थानः रूमी की चयनित कविताओं और हेस के सिद्धार्थ का तुलनात्मक विषयगत अध्ययन। जर्नल ऑफ़ इस्लामिक थॉट एंड सिविलाइज़ेशन।
- बासुकी, एडी और सपुत्री, तियास। (2022)। "बुक ऑफ़ लव पोयम्स" पुस्तक में जलालुद्दीन रूमी की कविताओं की आलंकारिक भाषा का विश्लेषण। शिक्षा और मानव विकास जर्नल. 6. 93–104